International Journal of Scientific Research in Science and Technology
Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X (www.ijsrst.com)
doi : https://doi.org/10.32628/IJSRST

समकालीन विचार परंपरा के संदर्भ में मुक्तिबोध

दिग्विजय कुमार राय
एसोसिएट प्रोफेसर बी0.एस.एन.वी पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज लखनऊ

Article Info
Volume 8, Issue 4
Page Number : 747-755

Publication Issue
July-August-2021

Article History
Accepted : 12 July 2021
Published : 30 July 2021

सारांश

साहित्य समाज की समालोचना है। समकालीन विचारों की क्रिया–प्रतिक्रिया से साहित्य का अनिवार्य संबंध निर्मित होता है। इस शोध आलेख में समकालीन विचारधारा गाँधीवाद और मार्क्सवाद के आलोक में मुक्तिबोध के विवेक निष्कर्ष मूल्यांकित हैं।

विषय संकेतः– मुक्तिबोध की विचारधारा गाँधीवाद, मार्क्सवाद और मुक्तिध

प्रस्तावनाः–

भारत ही नहीं, आधुनिक विश्व के संपूर्ण इतिहास में गाँधी जी युगपुरुष के रूप में प्रतिष्ठित। उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धातों और विचारों का लोहा आज संपूर्ण विश्व ने मान लिया है। गाँधी जी सिद्धातों और विचारों को ही 'गाँधीवाद' कहा जाता है। सत्य और अहिंसा की राह पर चलकर विश्व और समाज के नवनिर्माण की परिकल्पना गाँधीवाद की विशेषता है। गाँधी जी शोषण रहित माज, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्रता और समानता का दर्जा प्राप्त हो, के पक्षधार थे। समाज । निर्धनता का उन्मूलन तथा निर्धनों को पूँजीपतियों के शोषण से मुक्ति प्रदान करने का विचार, गाँध बाद में अंतर्निहित है। ''गाँधीवाद व्यक्ति के साथ–साथ समाज के हित का भी पूरा ध्यान रखता है। धीवाद को दार्शनिक शब्दावली में आध्यात्मिक मानववाद कहा जा सकता है। इसके दो मूलाधार हैंः सत्य और अहिंसा'''।

इसी प्रकार बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में प्रस्फुटित होकर जिस विचारधारा ने संपूर्ण वश्व के देशों की राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक आदि तमाम परिस्थितियों को बृहद् रूप से प्रभावित कया वह है– मार्क्सवाद। गाँधीवाद तथा मार्क्सवाद के सिद्धातों में अनेक समानताएँ है। मार्क्सवाद घोषित सर्वहारा वर्ग को शोषण और असमानता के दलदल से बाहर निकालना चाहता है, उसी प्रकार धीवाद भी समाज के निम्न व गरीब तबके के लोगों का उद्धार चाहता है। गाँधीवाद की मंशा भी ही है जो मार्क्सवाद की है। गाँधीवाद में जो मूल भावना है वह मार्क्सवाद से गहरा संबंध रखती । इतनी समानता होने पर भी दोनों में एक मूल अंतर है जो दोनों सिद्धातों को दो अलग–अलग दशाओं में लेकर जाता है और दो भिन्न–भिन्न सिद्धातों के रूप में प्रतिष्ठित करता है। यह अंतर है– सद्धांत में अभीष्ट की

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

प्राप्ति के लिए व्यावहारिक रूप में अपनाया जाने वाला मार्ग। गाँधीवाद जिस र्ग पर चलकर अपने लक्ष्य को पाना चाहता है वह मार्क्सवाद के मार्ग से बिलकुल भिन्न है, या हें कि पूर्णतः विपरीत है। ''मार्क्स की ही तरह गाँधी जी भी दरिद्रता का अन्त चाहते थे, निर्धनों को पूँजीपतियों के शोषण से मुक्त कराना चाहते थे। दोनों श्रम को अत्यधिक महत्त्व देते थे। दोनों सिद्धांत को क्रियात्मक रूप देना चाहते थे कि प्रत्येक से उसकी सामर्थ्य के अनुसार काम लिया ये तथा प्रत्येक को उसकी आवश्यकतानुसार पारिश्रमिक दिया जाए। दोनों, भावी आदर्श व्यवस्था राज्य की सत्ता नहीं मानते हैं। मार्क्स का कहना है कि राज्य एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग का शोषण करने का साधन है। गाँधी जी इसे हिंसा का मूर्तरूप तथा वैयक्तिक स्वतंत्रता का विरोधी समझते हैं। अतः दोनों राज्य की सत्ता के उन्मूलन पर बल देते हैं। इन समानताओं के होते हुए भी दोनों में एक बड़ा भेद हिंसा के प्रश्न पर दिखाई देता है। गाँधी जी अहिंसा के उपासक हैं। मार्क्स संघर्ष को ख्ष्टि का प्रधान तत्त्व मानते हैं। वे साम्यवाद की स्थापना के लिए क्रांति युद्ध तथा हिंसा के उपायों को बुरा नहीं समझते।''

गाँधीवाद और मार्क्सवाद दोनों का उद्देश्य एक है, किन्तु उसकी प्राप्ति के मार्ग भिन्न हैं। धी जी ने सत्य, अहिंसा और प्रेम के सिद्धांतों से आदर्श विश्व और आदर्श राष्ट्र के निर्माण का वप्न देखा । सत्याग्रह जैसे हथियार से उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को नवीन दृष्टि और दिशा दान की। गाँधीवाद सर्वोदय का विचार रखता है, व्यक्ति, राष्ट्र और विश्व के कल्याण की बात धीवाद में है। गाँधी जी व्यक्ति के नैतिक उत्थान पर जोर देते थे। ''वैचारिक संघर्ष में न पड़कर विश्व को सर्वोदय का संदेश गाँधी जी की महत्त्वपूर्ण देन है। अहिंसात्मक क्रांति के रूप में यह मानव पात्र का नैतिक उत्थान करना चाहता है। गाँधी जी ने अपने जीवन में आध्यात्मिकता और नैतिकता को प्रधानता दी थी और वह प्रधानता उनके सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि सभी प्रकार के वचारों में स्पष्ट झलकती है। गाँधीवाद राजनीतिक विचार दर्शन होने की अपेक्षा एक नैतिक जीवन दर्शन अधिक है।'' गाँधी जी व्यक्ति के नैतिक आचरण में शुद्धता चाहते थे। नैतिकता का दामन थामे रखना और सदैव मर्यादित आचरण करना, गाँधी जी आवश्यक मानते थे। वे चाहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति नैतिक मूल्यों के आधार पर मर्यादित जीवन जीये। वे समाज की प्रत्येक समस्या को नैतिकता से जोड़कर देखते थे और उनका मानना यह था कि प्रत्येक समस्या के समाधान के लिए सर्वप्रथम हमें अपने हृदय की शुद्धता और मर्यादापूर्ण नैतिक आचरण पर जोर देना चाहिए, तभी समस्या का उचित निराकरण हो सकता है। गाँधीवाद संपूर्ण विश्व को एक सूत्र में बँधा हुआ देखना चाहता है। गाँधी जी चाहते थे कि विश्व के समस्त राष्ट्र भेदभाव रहित भावना के साथ संगठित होकर एक संघ की स्थापना करें, जिससे मानव का कल्याण हो। '' गाँधी जी चाहते थे कि विश्व के राष्ट्र, विश्व संघ की स्थापना करें। गाँधी जी की कल्पना का विश्व अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति, सहयोग और मित्रता का विश्व था।''

जिस समय भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन गाँधीजी के सिद्धांतों का अनुसरण कर रहा था, साहित्यिक क्षेत्र में वह छायावाद के चरमोत्कर्ष का काल था। गाँधीवाद उत्तरोत्तर अधिक प्रबल हुआ। सन् 1936 ई. के आस पास छायावाद के अवसान के चिह्न स्पष्ट होने के साथ ही प्रगतिवाद की दस्तक हिन्दी साहित्य के द्वार पर सुनाई देने लगी। लगभग यहीं से मुक्तिबोध के रचना काल का आरंभ हुआ। यह काल साम्राज्यवाद तथा समाजवाद में संघर्ष के चरमोत्कर्ष का काल भी था। इसकी शुरुआत प्रथम विश्वयुद्ध तथा रूस की क्रांति के समय से हो चुकी थी जब मार्क्सवाद का प्रादुर्भाव और वर्चस्व विश्व भर में स्थापित होने लगा था। मुक्तिबोध गाँधी जी और उनके विचारों के

प्रति आस्थावान थे। भारत इतिहास और संस्कृति' में वे लिखते हैं– '' हजारों वर्षों में एकाध बार जो आदमी नजर आते हैं, उनमें महात्मा गाँधी का नाम आता है। क्यों? इसलिए कि उन्होंने राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए विशुद्ध नैतिक अस्त्रों का सफलतापूर्वक प्रयोग किया। 'अहिंसा और सत्याग्रह'– उनके ये दो प्रधान सिद्धांत हैं, जिनके द्वारा उन्होंने भारतीय स्वाधीनता स्थापित की। इस प्रचंड ब्रिटिश साम्राज्य को, जो सन् सैंतालीस के पहले दुनिया के सभी हिस्सों में था महात्मा गाँधी ने ऐसी करारी चोट दी कि वह हिल गया। जिस समय महात्मा गाँधी राजनीति में अवतीर्ण हुए उन दिनों देश की दशा क्या थी? जनता कष्ट में डूबी हुई थी, लेकिन सिर ऊँचा नहीं कर सकती थी। शिक्षित मध्यवर्ग को मालूम नहीं था कि वह किधर जाये प्राचीन की ओर जाने में उसकी आँखों से सामाजिक जीवन का लक्ष्य लुप्त हो जाता है। जो कुछ नवीन था वह पश्चिम से मिला था, उसकी उस पर अटूट श्रद्धा न थी। पहली बार भारत के इतिहास में करोड़ों भूखे जनों को महत्त्व देने वाला, इनका सगा बनने वाला एक व्यक्ति सम्मुख आया (जिसने उसी गरीब दबी–कुचली जनता को नैतिक साहस प्रदान करके क्या–का– क्या बना दिया! उस नैतिकतापूर्ण जनशक्ति के आघात से ब्रिटिश साम्राज्य चूर–चूर हो गया। मुक्तिबोध महात्मा गाँधी को भारतीय इतिहास के श्रेष्ठतम राजनैतिक पुरुषों में से एक मानते हैं''। इस श्रेणी में वे जवाहर लाल नेहरू को भी स्थान देते हैं– '' अगर कोई पूछे कि भारत के श्रेष्ठतम राजनैतिक पुरुष कौन हुए जिनका नाम और काम दुनिया को जानना चाहिए तो इसका उत्तर होगा अशोक, अकबर, महात्मा गाँधी और पण्डित जवाहर लाल नेहरू! ''

अतः स्पष्ट है कि मुक्तिबोध भारतीय राजनीति के परिप्रेक्ष्य में गाँधी जी के योगदान को अमूल्य मानते हैं। भारतीय राजनीति के क्षेत्र में दिशाहीनता के विकट समय में गाँधीवाद का पदार्पण हुआ था। वे गाँधीजी को एक युग प्रवर्तक राजनीतिज्ञ के तौर पर देखते थे और भारतीय राजनीति पर गाँधी जी के विचारों के गहन प्रभाव को स्वीकार करते थे। यही कारण है कि उन्होंने गाँधी जी को भारत के इतिहास के श्रेष्ठतम राजनीतिज्ञों की सूची में सम्मिलित किया। भारत की जनता को गाँधी जी द्वारा प्रदत्त नैतिक विचारधारा की शक्ति के आधार पर ब्रिटिश साम्राज्य चूर–चूर हो गया। कला और साहित्य के प्रति गाँधी जी का दृष्टिकोण लोक कल्याणकारी था। कला को जन सामान्य के विकास से जोड़कर देखने के कारण गाँधी जी कला को लोक कल्याण का एक जरिया मानते थे। गाँधी जी ने अपनी विचारधारा से साहित्य व कला को सीधे तौर प्रभावित नहीं किया, किन्तु व्यक्ति व समाज की विचारधारा को उन्होंने गहराई से प्रभावित किया। कला व साहित्य का निर्माण व्यक्ति व समाज की विचारधारा के आधार पर ही होता है, अतः उस पर भी गाँधीवाद का प्रभाव स्वतः ही पड़ गया। इस प्रकार गाँधीवाद ने जहाँ एक ओर युगीन आवश्यकता को भाँपते हुए देश व समाज की विचारधारा को उसी के अनुरूप विकसित किया तो वहीं दूसरी ओर कला और साहित्य का पक्ष भी इससे अछूता न रहा । ''गाँधीजी 'शिव' और 'सत्यं' पर ही बल देते थे, 'सुन्दर' को वे या तो दोनों से भिन्न मानते थे, या फिर उसे ग्रहण नहीं करते थे। इसीलिए कला पर गाँधी जी का सीधा प्रभाव अधिक नहीं पड़ा। गाँधी जी ने अपने युग की चिन्तनधरा को प्रभावित करते हुए अप्रत्यक्ष रूप से ही आज के साहित्य और कला को प्रभावित किया।''

स्वतंत्रता के पश्चात गाँधी के नाम पर अपनी रोजी–रोटी चलाने वाले ढोंगी, स्वार्थी और मौकापरस्त राजनीतिज्ञों की भीड़ सी लग गई। गाँधी जी के सिद्धांतों को अपनाकर जीवन में व्यावहारिक रूप देने का ढोंग करने वाले इन स्वार्थवादियों को मुक्तिबोध पहचानते हैं। अपने स्वार्थ की सिद्धि हेतु कई प्रकार के लोगों ने गाँधीवाद का

चोला ओढ़कर, उसका उपहास किया है। इस बात पर मुक्तिबोध कड़ी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। वे यह मानते हैं कि गाँधीजी के विचारों का कुछ लोगों ने आधा–अधूरा अनुकरण किया है, जिस पर तीव्र प्रतिक्रिया होनी अवश्यंभावी है। यह तीव्र प्रतिक्रिया प्रकृति द्वारा की जा रही है, क्योंकि इस बात से वे भी आहत हैं–

'मानव – मस्तक में से निकलेकुछ ब्रह्म राक्षसों ने
पहनी गाँधी जी की टूटी चप्पल हरहरा उठा यह
पीपल तब हँस उठा उठाकर, गर्जन कर, गाँव का
कुँआ तब दूर, सुनाई दिया शब्द, 'हुआ' 'हुआ!''

अपने स्वार्थों के तुष्टिकरण हेतु महापुरुषों के विचारों के आधे–अधूरे तथा टूटे–फूटे अनुकरण के ढोंग को शोषण की विद्रूप सभ्यताओं के लोभी संचालक, आम जनता की दृष्टि से, अधिक समय तक छुपाकर नहीं रख सकते। प्रकृति तो उनके इस छद्मावरण की प्रत्यक्षदर्शी होती ही है, किंतु आम जनता के सम्मुख भी उनके ढोंग की पोल एक न एक दिन खुल ही जाती है।

भारत के स्वतंत्रता संग्राम में पूँजीपति भी गाँधी जी के हमकदम थे और उनका पूर्ण सहयोग कर रहे थे। सभी वर्गों के लोग एक ही लक्ष्य को साथ लेकर उनके दिशानिर्देशों के अनुसार कार्य कर रहे थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए गाँधी जी के इस महायज्ञ रूपी आंदोलन में भागीदारी हेतु सभी वर्गों यथा पूँजीपति, मध्यवर्ग, सर्वहारा आदि का खुला स्वागत था। कुल मिलाकर गाँधी जी समूह की शक्ति को साथ लेकर चल रहे थे। किन्तु मुक्तिबोध यह मानते थे कि धीरे–धीरे गाँधीवाद का झुकाव पतन की और उन्मुख हो रहे पूँजीवाद की तरफ बढ़ रहा है। गाँधीवाद ने उसे अपनी कमजोरी बना लिया था, ठीक ऐसी ही बात हिंदी की छायावादी प्रवृति के साथ भी थी। घोर वैयक्तिकता और दृष्टिकोण में अवैज्ञानिकता को वे पूँजीवादी साहित्य व दर्शन की विशेषताएँ मानते हैं और इन्हीं कारणों को ही वे पूँजीवादी साहित्य व दर्शन के ह्रास हेतु उत्तरदायी मानते हैं। ''आज गाँधीवादी नीति वर्तमान स्थिति में और छायावादी साहित्य विद्यमान क्षण में पूँजीवादी कमजोरी के शिकार हैं। व्यक्ति की अपनी व्यावहारिक नीति की रक्षा और सामाजिक कर्तव्य की रक्षा का भान तब तक संभव नहीं जब तक वह इस वैचारिक सड़ाव से पूर्णतया परिचित नहीं हो लेता।''

मुक्तिबोध मानते हैं कि आत्मोन्नति के लिए समाज की उपेक्षा करना उचित नहीं है। ऐसा करके व्यक्ति एक प्रकार से स्वयं का ही विरोध करता है। पूँजीवाद अपनी इसी व्यक्तिकेन्द्री प्रवृति के कारण पतनोन्मुख है। गाँधीवाद द्वारा पूँजीवाद की इस व्यक्तिवादी आत्मकेन्द्री प्रवृति से सहृदयता दिखलाने को मुक्तिबोध उचित नहीं ठहराते ''शिलर और गाँधी के समान पूँजीवादी दरारों को भरकर आत्मोन्नति का मार्ग ढूँढना जीवन प्रवाह के लिए बहुत ही खतरनाक है। ऐसे सब आध्यात्मिक पैंतरों से बचकर व्यक्ति को अपने सामाजिक कर्तव्य के प्रति के प्रति दृढ़ होना अत्यंत आवश्यक है।''

मुक्तिबोध आत्म–स्वातंर्त्य प्राप्त करने के लिए सामूहिकता को आवश्यक बतलाते हैं तथा व्यक्ति द्वारा अपने सामाजिक कर्त्तव्य को ईमानदारी से निभाने पर जोर देते हैं। सामूहिकता के पक्षधर मुक्तिबोध, व्यक्ति के कल्याण के स्थान पर जनसमूह तथा संपूर्ण समाज की मुक्ति की बात करते हैं। वे मानते हैं कि मुक्ति कभी अकेले नहीं मिलती, वह तो तभी संभव है जब जन–मन को उसमें सम्मिलित किया जाए–

'' अरे जन–संग ऊष्मा के

बिना, व्यक्तित्त्व के स्तर जुड़ नहीं सकते।

वह जीवन लक्ष्य उनके प्राप्त करने की क्रिया में से

उभर ऊपर विकसते जाएँगे निज के तुम्हारे गुण

कि अपनी मुक्ति के रास्ते अकेले में नहीं मिलते।

सबकी मुक्ति में व्यक्ति की मुक्ति का स्वप्न देखने वाले मुक्बिोध सामूहिक मुक्ति और समग्र समाज के कल्याण के मार्ग को सद्मार्ग मानते थे। वे संपूर्ण मानव जाति को सुखी, सुंदर व शोषणमुक्त देखना चाहते थे

''समस्या एक–

मेरे सभ्य नगरों और ग्रामों में सभी मानव

सुखी, सुंदर व शोषणमुक्त कब होंगे।''

मुक्तिबोध उन्नति के शिखर पर आसीन कलाकारों, साहित्यकों, चिंतकों से अपेक्षा करते हैं कि वे समाज को साथ लेकर चलें, क्योंकि वे उन पर हावी हो रही वैयक्तिक प्रवृति को घातक मानते हैं। गाँधीवादी विचारधारा में घुल रही वैयक्तिक प्रवृत्ति के कारण वे उसे इसी श्रेणी में रखते हैं। मुक्तिबोध मानते हैं कि अपने द्वारा बनाए साँचे में जगत् को ढालने की चेष्टा करने के स्थान पर हमारे द्वारा अपने उस दर्शन को सामाजिक धरातल पर ले जाकर प्रसारित करना अधिक आवश्यक है।' भारतीय कलाकार, चिंतक तथा साहित्यकारों ने अपनी व्यक्तिगत उन्नति को पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया है किन्तु अपने साथ वे समाज को न ला सके। इसका प्रधान कारण उनकी परमोच्च विचार–प्रण पाली जो उनकी वैयक्तिक प्रवृतियों के अनुसार बनी। गाँधी बाबा का अहिंसावाद, जैसा कि मेरे एक मित्र कहते हैं, इसी कोटि का है। यानी आने वाले कल के लोगों को उसकी कार्य में परिणति कठिन मालूम होगी। आज भी अहिंसात्मक सिद्धांत राजनीति की दृष्टि से कहाँ तक योग्य हैं, यह विचारणीय है।''

यह एक ऐसा बिन्दु है जहाँ पर मुक्तिबोध राजनीति की दृष्टि से गाँधीवादी विचारों से सहमत नहीं हैं। इसके पीछे मुख्य कारण यह है कि वे थोपे गए विचार या सिद्धांत के स्थान पर ऐसी विचारधारा के पक्षधर रहे हैं जो सामाजिक धरातल से उठकर सामूहिक मुक्ति की भावना को सबके साथ लेकर चले। मुक्तिबोध गाँधी जी तथा उनके विचारों का सम्मान करते थे किन्तु समय के साथ–साथ इस सिद्धांत की व्यावहारिकता पर उन्हें संदेह था। यद्यपि सामूहिकता की भावना गाँध जीवाद में भी थी किंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात गाँधीवादी विचारों को या तो लोग त्याग रहे थे या फिर स्वार्थवादी तत्व उन्हें अपनाने का ढोंग कर अपनी स्वार्थसिद्धि कर रहे थे। इस प्रकार उसमें व्यक्तिवादिता को घोला जा रहा था। मुक्तिबोध की सर्वप्रसिद्ध कविता ''अंधेरे में'', जिसका संभावित रचनाकाल (मुक्तिबोध रचनावली के अनुसार) 1956 ई. से 1962 ई. के मध्य का है, में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात की इस विडम्बना को फैंटेसी शैली द्वारा गाँधी जी को प्रकट कराकर, अत्यंत मार्मिक रूप में प्रस्तुत किया गया है।

मुक्तिबोध स्वाधीनता प्राप्ति में गाँधी जी के अमिट योगदान और जनता द्वारा इसमें की गई बराबर की भागीदारी को मानते थे, उसे स्वीकार करते थे। यह भी सही है कि स्वाधीनता संघर्ष में बुर्जुआ संस्तुति के संस्कार उनका साथ दे रहे थे और आम जनता तन, मन, धन से गाँधी जी के विचारों का परिपालन कर उनका सहयोग कर रही थी। यही कारण था कि स्वाधीनता की प्राप्ति भी हो सकी। गाँधी जी जनता की शक्ति के महत्त्व को पहचानते थे, जिसका उन्होंने भली–भाँति प्रयोग भी किया। किंतु वर्तमान समय में सत्ता के संचालक जनता को एक तरफ हटाकर

उनके आदर्शों और विचारों को खोखला साबित कर रहे हैं। अपनी सत्तलोलुपता और स्वार्थसिद्धि के लिए उन्होंने गाँधीवाद को एक हथकंडे के रूप में अपनाया है, उसे एक मुखौटे की तरह पहना है। ''अंधेरे में'' नामक कविता में मुक्तिबोध ने गाँधी जी को परवर्ती युग संदर्भ में प्रकट कराकर उन्हें इन बातों से आहत होते दर्शाया है। इस प्रसिद्ध कविता में वाचक के सम्मुख गाँधी जी जर्जरावस्था में एक फटी हुई बोरी ओढ़े प्रकट होते हैं। गाँधी जी वाचक से कहते हैं–

'' हम हैं गुजरे जमाने के चेहरे आगे तू बढ़ जा। ''

इस कथन से मुक्तिबोध यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश में उत्पन्न विकट परिस्थितियों में गाँधी जी की विचारधारा फलीभूत नहीं हो पा रही है। यही कारण है कि परवर्ती काल में प्रकट होकर गाँधी जी स्वयं को गुजरे जमाने का कहकर वाचक को आगे बढ़ने की सलाह दे रहे हैं। किंतु मार्क्सवाद पर आस्था रखने के कारण मुक्तिबोध भी जनशक्ति के महत्त्व को गाँधी जी की ही तरह पहचानते हैं। इसीलिए कविता को अगली ही पंक्तियों में मुक्तिबोध ने गाँधी जी के द्वारा कहलवाया है कि आम जनता को दरकिनार करके कोई भी आत्मग्रस्त व्यक्ति महान नहीं बन सकता, क्योंकि आम जनता को साथ लेकर चलने से हो सफल भविष्य का निर्माण हो सकता है। वे कहते हैं–

'दुनिया न कचरे का ढेर कि जिस पर
दानों को चुगने आया कोई भी कुक्कुट कोई भी
मुरगा यदि बॉग दे उठे जोरदार बन जाए मसीहा'
जनता के गुणों से ही सम्भव भावी का उद्भव...'''

ये पंक्तियाँ देश की तत्कालीन विडम्बनाओं को उजागर करती हैं। कविता में वाचक से गाँधी जी आगे बढ़ने को इसी कारण कहते हैं कि जनता को साथ लेकर चलने से ही स्वाधीनता प्राप्त हुयी थी, किंतु वर्तमान में स्वार्थवाद आत्मग्रस्तता को बढ़ा रहा है और जनता को दरकिनार कर सत्ताधरियों द्वारा मसीहा बनने का प्रयत्न चल रहा है। आम जनता को साथ लिए बगैर कल्याणकारी भविष्य की कल्पना नहीं की जा सकती, बल्कि गुणों से भावी का उद्भव संभव है। कविता में गाँधी जी द्वारा यह सब कहलाकर मुक्तिबोध ने गाँधीवादी विचारों में पड़ी उस दरार को भरने का प्रयास किया है जो कि उन्हें नजर आती थी। गाँधी जी का जर्जरावस्था में अवतरण होना एक प्रकार से गाँध जीवादी विचारों की दुर्गति कर दिए जाने का द्योतक है। मुक्तिबोध शोषण से मुक्ति के लिए जनता को साथ लेकर चलने वाले विचार से गाँधीवाद की ही भाँति सहमत हैं–

''मेरे पास चुपचाप सोया हुआ यह था।
सँभालना इसको सुरक्षित रखना। ''

यह शिशु वाचक के पास से, फैंटेसी द्वारा पहले सूरजमुखी फूल के गुच्छों में तथा उसके बाद वजनदार रायफल में परिवर्तित हो जाता है। गाँधी जी ने भावी के उद्भव' हेतु जनता के गुणों की जो महत्ता बतायी उससे मुक्तिबोध सहमत हैं क्योंकि, स्वाधीनता इसी से प्राप्त हुयी थी। किंतु जनता का यह संघर्ष आगे चलकर सशस्त्र जनक्रांति में परिवर्तित हो जाता है। यहाँ पर गाँधी जी के विचारों से मुक्तिबोध का अलगाव प्रकट होता है। 'अंधेरे में'

कविता में गाँधी जी को प्रकट करा मुक्तिबोध ने उनके सिद्धांतों की, जन–संघर्ष के अपने सिद्धांतों से भिन्नता का संकेत देने के साथ ही उनके प्रति अपनी आस्था भी व्यक्त की है, उनकी जन–कल्याणकारी भावना को प्रशस्ति की है तथा उनके द्वारा जनता की सामूहिक शक्ति को महत्त्व देने की बात कहलवायी है। उन्होंने गाँधी जी के माध्यम से उन लोगों पर व्यंग्य किया है, जो निजी स्वार्थों की पूर्ति के लिए मसीहा बनने का ढोंग करते हैं और व्यक्तिगत स्वार्थों के पोषण हेतु जनता को दरकिनार करते हैं। गाँधी जी ने जीवन भर मानव कल्याण को अपना लक्ष्य बनाये रखा, इस कारण मुक्तिबोध की उन पर आस्था थी और उनके जिन विचारों से मुक्तिबोध सहमति रखते थे कविता में वे ही बातें गाँधी जी से कहलवायी गई हैं। यह मुक्तिबोध की गाँधी जी के विचारों के प्रति आस्था का सूचक है।

मुक्तिबोध को गाँधी जी तथा उनके विचारों की महानता पर संदेह न था पर वे अंध भक्ति को उचित नहीं मानते थे। वे सही मायने में देशभक्त बनने पर जोर देते थे तथा चाहते थे कि जन–साधारण जीवन, समाज व देश के प्रति पूर्ण ईमानदारी बरते और अपनी ज्ञानेन्द्रियों को सदैव सजग रखें। ''देशप्रेम के नशे में हम अपनी कमजोरियाँ बहुत जल्दी भूल जाया करते हैं। भारत से प्रेम करना उसके गुण गाना नहीं है, भारतीय संस्कृति के उपासक उसके दोष देखना भूल जाया करते हैं। ''गुण–दोषों का विवेचन आवश्यक है, इसी कारण मुक्तिबोध ने 'अंधेरे में' कविता में गाँधीजी को अवतरित कराकर उनके ही द्वारा गाँधीवाद में पड़ी दरार को भरने का प्रयत्न किया है। यद्यपि वे गाँधी जी के महान व्यक्तित्त्व की महानता को स्वीकारते हुए उन्हें महानतम विभूतियों में सम्मिलित करते हैं। ''महात्मा गाँधी ने देश की स्वाधीनता, विश्व की शांति तथा अन्याय के विरुद्ध अहिंसात्मक प्रतिरोध और मानव हृदय को नैतिक बल प्रदान किया। उन्होंने देश और विश्व के बड़े–बड़े मनीषियों के विचारों को अपने में रंग दिया, भारतीय जनता को नए आध्यात्मिक संस्कार प्रदान किए। देश की महत्तम विभूतियों में महात्मा गाँधी का नाम है।''

मुक्तिबोध गाँधी जी के त्याग, नैतिक बल, निस्वार्थ भाव के भी कायल थे। आज के युग में पदलोलुप राजनीतिज्ञों की भरमार है, जबकि गाँधी जी ने कभी किसी प्रकार के पद से कोई वास्ता नहीं रखा। गाँधी जी के इन्हीं महान विचारों के बदौलत ही मुक्तिबोध आज के अणु–युग में गाँधीवाद को आवश्यक मानते हैं। ''इस बुढ़ापे में महात्मा गाँधी सरीखे बहुत कम लोग हैं जिन्होंने अपने जीवन और मरण में इतनी महान व व्यापक ख्याति प्राप्त की हो। लेकिन इसका कारण एक यह भी था कि वे किसी पद पर नहीं थे, यहाँ तक कि कांग्रेस से भी उन्होंने पद–वद के मामले में कोई ताल्लुक नहीं रखा। लेकिन ऐसे भाग्यवान और बुद्धिमान बढ़े बहुत कम होते हैं। आज के अणु–युग में गाँधीवाद अपरिहार्य हो गया हैं।''

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मुक्तिबोध गाँधीजी व गाँधीवाद दोनों को सम्मान की दृष्टि से देखते थे। भारतीय राजनीति के परिप्रेक्ष्य में गाँधी जी के योगदान को स्वीकार करने के साथ–साथ मुक्तिबोध गाँधी जी के मानवतावाद के भी समर्थक थे। जिस प्रकार 'सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय' की भावना गाँधीवाद के मूल में है उसी प्रकार यही भावना मुक्तिबोध की विचारधारा के मूल का निर्माण करती है। गाँधीवाद के समान ही शोषणमुक्त और समानता से युक्त स्वस्थ व परिष्कृत समाज की स्थापना की आकांक्षा व इच्छा मुक्तिबोध के व्यक्तित्व व कृतित्त्व दोनों में समाहित है। किन्तु उन्हें इस बात पर पीड़ा होती थी कि स्वतंत्रता के पश्चात कुछ स्वार्थवादियों, सत्तालोलुप सफेदपोशों और मौका परस्तों ने व्यक्तिगत स्वार्थसिद्धि हेतु गाँधीवाद का मुखौटा पहनकर उसे दुर्गति की देहरी तक पहुँचा दिया है, जिस कारण स्वतंत्रता के पश्चात वह भली–भाँति फलीभूत नहीं हो पा रहा है। यद्यपि, लक्ष्य प्राप्ति हेतु

अपनाये जाने वाले मार्ग की दृष्टि से मुक्तिबोध का गाँधीवाद से अधिक मेल न हो, परन्तु लक्ष्य की दृष्टि से वे गाँधीवाद से एकता स्थापित किए हुए दिखाई देते हैं। दोनों का अभीष्ट लक्ष्य एक ही है। गाँधीवाद ने संपूर्ण विश्व में जिस प्रकार अपनी धाक जमायी तथा सत्य और अहिंसा का लोहा मनवाया, उससे निसंदेह मुक्तिबोध अत्यधिक प्रभावित थे।

संदर्भ सूची–

- डॉ. नगेन्द्र, आस्था के चरण, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1968, पृ. 2481
- फड़िया, बी. एल. आधुनिक राजनीतिक चिंतन का इतिहास, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा (उ.प्र.), संशोधित संस्करण 1997, पृ. 441
- फड़िया, बी. एल. आधुनिक राजनीतिक चिंतन का इतिहास, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स,आगरा (उ.प्र.), संशोधित संस्करण 1997, पृ. 442
- फड़िया, बी. एल. आधुनिक राजनीतिक चिंतन का इतिहास, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स,आगरा (उ.प्र.), संशोधित संस्करण 1997, पृ. 442 1
- (सं.) जैन, नेमीचन्द्र, मुक्तिबोध रचनावली छह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, (द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण), पहली आवृत्ति 1968, भारत इतिहास और संस्कृति, पृ. 569–572
- (सं.) जैन, नेमीचन्द्र, मुक्तिबोध रचनावली– छह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, (द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण), पहली आवृत्ति 1998 भारत इतिहास और संस्कृति, पृ. 574
- नगेन्द्र, आस्था के चरण, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1968, पृ. 251
- मुक्तिबोध, गजानन माधव चाँद का मुँह टेढ़ा है, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पन्द्रहवाँ (सं.) संस्करण2003, पृ. 70 1
- नेमीचन्द्र जैन, मुक्तिबोध रचनावली–पाँच, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, (द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण), पहली आवृति 1968, पृ. 38 1
- (सं.) नेमीचन्द्र जैन, मुक्तिबोध रचनावली–पाँच, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, (द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण), पहली आवृति– 1968, पृ. 39–401
- मुक्तिबोध, गजानन माधव चाँद का मुँह टेढ़ा है, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पन्द्रहवाँ मुक्तिबोध, गजानन माधव चाँद का मुँह टेढ़ा है, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पन्द्रहवाँ संस्करण 2003, पृ. 158
- मुक्तिबोध, गजानन माधव चाँद का मुँह टेढ़ा है संस्करण–2003, पृ. 168
- (सं.) जैन, नेमीचन्द्र, मुक्तिबोध रचनावली छह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, (द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण), पहली आवृति–1998, भारत इतिहास और संस्कृति, पृ.26 1

- मुक्तिबोध, गजानन माधव चाँद का मुँह टेढ़ा है, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पन्द्रहवाँ मुक्तिबोध, .संस्करण–2003, पृ. 277
- गजानन माधव चाँद का मुँह टेढ़ा है, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पन्द्रहवाँ संस्करण–2003, पृ. 278
- मुक्तिबोध,गजानन माधव चाँद का मुँह टेढ़ा है, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली,पन्द्रहवाँसंस्करण 2003, पृ. 278
- (सं.) जैन, नेमीचन्द्र, मुक्तिबोध रचनावली छह, राजकमल प्रकाषन, नई दिल्ली, (द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण), पहली आवृति–1998, भारत इतिहास और संस्कृति, पृ. 27